स्टे हंगरी स्टे फूलिश,
कनेक्ट द डॉट्स और *आई हैव ए ड्रीम*
जैसी सफल किताबों की
लेखिका की कलम से

सात रंग के सपने
से लिया गया

सपनों से आगे
मीना बिंद्राः बीबा

रश्मि बंसल

अनुवादः उर्मिला गुप्ता

यात्रा

सात रंग के सपने
से लिया गया

सपनों से आगे
मीना बिंद्राः बीबा

रश्मि बंसल

अनुवादः उर्मिला गुप्ता

w

यात्रा

वैस्टलैंड लिमिटेड

61, सिल्वरलाइन अलपक्कम मेन रोड, मदुरावोयल, चेन्नई-600095

नं. 38/10 (नया नं. 5), राघव नगर, न्यू टिंबर यार्ड लेआउट, बैंगलुरु-560026

93, प्रथम मंज़िल, शाम लाल रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

अंग्रेजी का प्रथम संस्करणः 'फोलो ऐवरी रेनबो, वैस्टलैंड लिमिटेड, 2013

हिंदी का प्रथम संस्करणः वैस्टलैंड लिमिटेड, यात्रा बुक्स के सहयोग से, 2013

कॉपीराइट © रश्मि बंसल, 2013

सर्वाधिकार सुरक्षित

10 9 8 7 6 5 4 3 2 1

आई.एस.बी.एनरू 978-93-82360-04-1

रश्मि बंसल दृढ़तापूर्वक अपने नैतिक अधिकार व्यक्त करती हैं कि उनकी पहचान इस पुस्तक के लेखक के रूप में हो।

टाइपसेटः अर्चना प्रिंटर्स, ईस्ट रामनगर, शाहदरा, दिल्ली-32, मोबाइल : 9811357243

मुद्रकः

यह पुस्तक इस शर्त पर विक्रय है कि प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना इसे व्यावसायिक अथवा अन्य किसी भी रूप में उपयोग नहीं किया जा सकता। इसे पुनः

प्रकाशित कर बेचा या किराए पर नहीं दिया जा सकता। इसका जिल्दबंद या खुले या किसी भी अन्य रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। ये सभी शर्तें पुस्तक के खरीदार पर भी लागू होंगी। इस संदर्भ में सभी प्रकाशनाधिकार सुरक्षित हैं। इस पुस्तक का आंशिक रूप में पुनः प्रकाशन या पुनः प्रकाशनार्थ अपने रिकॉर्ड में सुरक्षित रखने, इसे पुनः प्रस्तुत करने, इसका अनूदित रूप तैयार करने अथवा इलैक्ट्रॉनिक, यांत्रिकी, फोटोकॉपी और रिकॉर्डिंग आदि किसी भी तरीके से इसका उपयोग करने हेतु समस्त प्रकाशनाधिकार रखने वाले अधिकारी और पुस्तक के प्रकाशक की पूर्वानुमति लेना अनिवार्य है।

अनुक्रम

[सपनों से आगे]

सपनों से आगे

मीना बिंद्रा

बीबा

39 साल की उम्र में, एक नेवी ऑफिसर की बीवी और दो बच्चों की मां ने *पॉकेट मनी* के उद्देश्य से खुद का बिजनेस शुरू किया। अपने दो बेटों की मदद से उन्होंने सलवार-कमीज के सामान्य से व्यवसाय को सालाना 300 करोड़ रुपए के नेशनल ब्रांड में बदलकर रख दिया।

रितु कुमार का नाम लाखों लोगों ने सुना होगा, लेकिन बहुत कम ऐसे हैं जो *रितु कुमार* खरीद पाते हैं।

कम लोगों ने मीना बिंद्रा का नाम सुना होगा, लेकिन लाखों लोग उनके बनाए कपड़े पहन रहे हैं।

बीबा पारंपरिक पोशाकों की रेडीमेड श्रृंखला का भारत का सबसे बड़ा ब्रांड है। इसके देशभर में 100 से ज्यादा स्टोर मौजूद हैं। इसकी शुरुआत 1982 में हुई, जब मीना ने महज आठ हजार रुपए के लोन के साथ अपना बिजनेस शुरू किया। उनका मकसद मात्र *पॉकेट मनी* था।

मीना से मेरी मुलाकात उनके दिल्ली से सटे छतरपुर एरिया में सादगी से बने ऑफिस में हुई। वह एक बड़ी मेज के पीछे, स्टाइलिश काले कुर्ते पर क्रीम स्टोल डाले बैठी थीं।

मीना देखने में एक आम भारतीय महिला की तरह हैं--एक ऐसी महिला जो भारत में पली-बढ़ीं, जहां लड़कियां पढ़ तो सकती थीं, लेकिन कभी 'कैरियर' के बारे में नहीं सोच सकती थी।

'19 साल की उम्र में मेरी शादी हुई,' मीना बताती हैं, 'और मैंने जीवन के अगले 20 साल अपने परिवार की देखरेख में लगाए।'

39 साल की उम्र में वह अनौपचारिक रूप से कपड़ों के डिजाइन और उन्हें बेचने के लिए प्रेरित हुईं।

बिना किसी बिजनेस प्लान या लक्ष्य के उन्होंने घर से ही काम करना शुरू किया। लेकिन मीना महिलाओं की नब्ज--स्टाइलिश, सस्ते पंजाबी सूट--को बखूबी पहचानती थीं।

'मैं खुशकिस्मत रही की मैं सही समय पर सही जगह पर थी,' उन्होंने जोड़ा। 'मुझे कभी बाहर मार्केटिंग के लिए नहीं जाना पड़ा।'

खरीदार और थोक विक्रेता रेडीमेड सूटों के लिए दरवाजे के बाहर लाइन लगाते थे।

फिर भी, सब कुछ आसान नहीं था। मीना के पति नेवी में ऑफिसर थे, उनकी जॉब में ट्रांसफर होते रहते थे। मतलब बिजनेस संभालने के लिए सात साल तक अलग शहर में रहना। मीना के लिए अकेले सब कुछ संभालना बड़ी चुनौती थी?

एक आदर्श मां सबके सहयोग से अपना घर चलाती है। मीना ने बिजनेस में भी इसी सिद्धांत को अपनाया--अपने बेटों के सहयोग से।

बड़े बेटे संजय ने व्यवसायिक कमान संभालते हुए बीबा को कॉटेज इंडस्ट्री से उद्योग के पैमाने पर ला खड़ा किया। छोटे बेटे सिद्धार्थ ने इसे अगले स्तर पर ले जाते हुए *बीबा* के स्वतंत्र स्टोर खोल दिए।

साथ-साथ काम करते हुए आज वे पारंपरिक पोशाकों का 300 करोड़ रुपए का साम्राज्य खड़ा कर चुके हैं।

सुनने पर यह बहुत ही आसान और परिकथानुमा प्रतीत होता है।
लेकिन क्या वास्तविक जिंदगी में ऐसा हो सकता है कि संभावनाएं हों और रुकावटें न हों।
यह आपके नजरिए पर निर्भर करता है कि आप क्या देखते हैं।

सपनों से आगे

मीना बिंद्रा

बीबा

मीना बिंद्रा का जन्म और परवरिश दिल्ली में ही हुई।

‘छह भाई बहनों वाले बड़े परिवार में पलकर मैं बड़ी हुई--तीन भाई और तीन बहन। मेरा नंबर उनके बीच में कहीं था।’

मीना के पिता एक व्यवसायिक थे, लेकिन जब मीना मात्र 9 साल की थी तब उनका देहांत हो गया। हालांकि, वह इतनी संपत्ति छोड़ गए थे कि उनकी बीवी ठीक से अपने बच्चों की परवरिश कर सके। मिरांडा हाउस से इतिहास में बीए करने के बाद मीना की शादी हो गई। उन्नीस साल की उम्र में उन्हें प्यार जो हो गया था।

‘मेरे पति इंडियन नेवी में थे और मुझसे लगभग दस साल बड़े थे।’

नेवी ऑफिसर की बीवी होने के नाते मीना को देशभर में घूमने का मौका मिला--दिल्ली, बॉम्बे, विशाखापतनम। एक जगह पर ज्यादा से ज्यादा तीन साल।

‘1965 में मेरे बेटे संजय का जन्म हुआ, और 1974 में सिद्धार्थ का। तो शादी के बीस साल तक मैं अपने घर परिवार की देखरेख में व्यस्त थी।’

जब बच्चे बड़े हुए, तब मीना ‘कुछ’ करने के बारे में सोच पाई।

‘बड़ा बेटा बोर्डिंग में था और छोटा स्कूल में। ताश खेलकर समय बिताने वालों में से मैं नहीं थी और साथ ही यह भी जानती थी कि नौकरी की राह मेरे लिए नहीं थी!’

मीना की असली खुशी कपड़े डिजाइनिंग में थी।

‘मैंने कोई औपचारिक कोर्स नहीं किया, लेकिन मुझे प्रिंट और रंगों में दिलचस्पी थी। शौकिया मैंने अपनी कुछ साड़ियों पर ब्लॉक प्रिंट करवाया।’

लेकिन कोई भी बिजनेस शुरू करने के लिए आपको *कुछ* रुपयों की आवश्यकता होती है।

'मैंने अपने पति से बात की और उन्होंने सिंडिकेट बैंक से लोन दिलवाने में मदद की।'

हालांकि आठ हजार रुपए बहुत बड़ी रकम नहीं है, लेकिन थोड़ा फेब्रिक खरीदने और एक दर्जी का बंदोबस्त करने के लिए पर्याप्त थे। कहा भी जाता है--भाग्य भी साहस का ही साथ देता है।

'ब्लॉक प्रिंटर देवेश से मिलना मेरे लिए पहला लकी ब्रेक रहा। वह युवक काम के प्रति समर्पित था। उसकी एक बड़ी फैक्टरी थी।'

हर सुबह मीना टैक्सी से फैक्टरी पहुंचती और वहां भिन्न-भिन्न तकनीकों और रंग संयोजन में प्रयोग करते हुए पूरा दिन बिताती।

'हम प्रिंटिंग की तकनीकों में नए-नए एक्सपेरिमेंट करते। टाई एंड डाई, खड़ी प्रिंटिंग--जो भी हमने किया उनके नतीजे लाजवाब ही रहे।'

प्रयोग और खामियों से गुजरते हुए, मीना ने 40 सलवार-सूट का कलेक्शन बनाया--200 रुपए से भी कम कीमत के पीस आकर्षक और अनौपचारिक अवसरों के लिए उपयुक्त थे। उनमें कुछ सिले हुए थे और कुछ बिना सिले।

'मैंने अपने घर में छोटी सी सेल रखी और पूरा कलेक्शन बिक गया। साथ ही मुझे अच्छा सा ऑर्डर भी मिला!'

पहली सेल से 3000 रुपए का छोटा सा मुनाफा भी हुआ। उस राशि से मीना 80 सूटों के फैब्रिक लाई और वह भी जल्दी ही बिक गए।

'इससे मुझे प्रात्साहन मिला। जो भी पैसे मुझे मिलते, मैं उन्हें और फैब्रिक खरीदने में लगा देती।'

यह था तो बिजनेस, पर सही मायनों में खरा बिजनेस भी नहीं।

'मैं बड़े फ्लैट में रहती थी, जो *ओपन हाउस* की तरह था। कोई चाय पी रहा है, कोई कॉफी पी रहा है... एक अच्छा माहौल था, जहां औरतें आकर बैठतीं, बातें करतीं।'

वे कपड़े देखतीं और खरीदतीं। उन्हें भरोसा था कि अगर घर जाने के बाद कोई चीज पसंद नहीं आई तो मीना वह वापस ले लेगी।

'वास्तव में वह कोरा व्यापार नहीं था,' मीना समझाती हैं। 'वे मेरे दोस्त पहले थे, खरीदार बाद में। मैं उन्हें सिर्फ ग्राहक नहीं समझती थी।'

बातों ही बातों में मीना के सूट बॉम्बे के कोलाबा और कूफे परादे की महिलाओं में 'फेमस' हो गए। साल खत्म होते-होते, उनके पास सिलाई के लिए तीन दर्जी थे और *बेंजर* और *शीतल* जैसे थोक विक्रेता भी उनसे माल लेने लगे।

'एक बार जब हमने बाहर माल सप्लाई करना शुरू किया तो, मुझे अपनी बिल बुक के लिए कोई नाम चाहिए था। मैंने *बीबा* रखा।'

थोक विक्रेता बड़े ऑर्डर देने लगे--एक बार में 100 पीस। वे फेब्रिक के नए डिजाइन और ज्यादा वैराइटी मांगने लगे।

'मैंने टेरीकोट और सिल्क में भी काम शुरू किया, और जल्द ही हमारा उत्पादन बढ़ने लगा।' मीना मुस्कुराते हुए बताती है।

टाइम पास करने के लिए शुरू किए गए शौकिया काम से *बीबा* जल्द ही वास्तविक व्यवसाय में बदल गया। संजोग बनते गए और काम निर्माता की उम्मीद से भी बड़ा हो गया।

'मैंने कभी कोई मार्केटिंग नहीं की, लेकिन सोचती हूं वह सही समय था। नई दुकानें खुल रही थीं, उन्हें रेडीमेड सलवार-कमीज चाहिए थे और उन्हें मेरा नाम पता चला... तो बस मुझे बड़े ऑर्डर मिलने लगे।'

पहले दो सालों की कमाई के बारे में मीना निश्चित नही है।

'मैं ठीक-ठाक कमाने लगी थी, लेकिन एकदम सटीक मुनाफा मुझे याद नहीं है... लाखों में तो नहीं, पर हां निश्चित रूप से मेरी कमाई हजारों में तो थी।'

हजार जल्द ही लाखों में बदल गए। 1986 में, मीना केंप कॉर्नर के 1000 वर्ग फीट के ऑफिस में शिफ्ट हो गईं। उस ऑफिस की पूरी रकम बीबा की कमाई से ही दी गई थी।

पर अब तक भी, कोई सुनिश्चित बिजनेस प्लान नहीं था।

'ऑर्डर की बरसात के साथ मैंने केंप कॉर्नर में अपना बुटीक भी खोल लिया।'

'जो बन रहा था बिक रहा था--तो न तो कोई लक्ष्य था, न ही डैडलाइन। मैंने खुद पर कभी भी दबाव महसूस नहीं किया।'

चीजें बस ऐसे ही आगे बढ़ रही थीं, तभी मीना का बड़ा बेटा संजय बीकॉम खत्म कर, बिजनेस से जुड़ा।

‘मैं बिजी रहना चाहती थी और कुछ पॉकेटमनी कमाना चाहती थी। इसीलिए मैंने कपड़े का बिजनेस शुरू किया।’

‘शुरू में मैंने उसे प्रोत्साहित नहीं किया। मैंने कहा--तुम्हें सलवार-कमीज के बारे में कुछ नहीं पता और फिर बिजनेस का भी तुम्हारा कोई अनुभव नहीं है! पहले एमबीए करो फिर मैं इस बारे में कुछ सोचूंगी।’

संजय ने तुरंत कोई जवाब नहीं दिया।

‘मैं कह सकती हूं कि शुरू में वह भी इतना गंभीर नहीं था, लेकिन जब एक बार वह ऑफिस आया तो फुल-टाइम *बीबा* का होकर रह गया।’

उसने साबित किया कि वह *बीबा* के लिए महत्वपूर्ण था। संजय ने जल्दी ही बिजनेस का उबाऊ पक्ष--लेबर पर नियंत्रण, ऑर्डर लेना, अकांउट देखना--संभाल लिया। अब मीना पूरे मन से डिजाइन पर ध्यान केंद्रित कर सकती थी।

अगले कुछ साल, *बीबा* का काम स्थिर गति से आगे बढ़ा। ज्यादा डिजाइन बने; ज्यादा स्टोर खुले सिर्फ बॉम्बे में ही नहीं, बल्कि देशभर में। हमें बंगलौर और जयपुर से ऑर्डर मिलने लगे।

1993 तक, *बीबा* पारंपरिक पोशाकों के क्षेत्र में भारत का सबसे बड़ा थोक व्यापारी बन गया, जो 1000-2000 पीस प्रतिमाह बेच रहा था।

‘मुझे लगता है तब तक हमारा टर्न ओवर 8-10 करोड़ रुपए

था... (अपना सिर हिलाते हुए)। नहीं, उस समय हम थोक में ही माल बेच रहे थे, तो इससे कम होगा। लगभग 2 करोड़ के आसपास रहा होगा।’

बिजनेस में पैसा तो था, लेकिन वजह सिर्फ वही नहीं थी। इस दौरान, कुछ अन्य कारण भी मीना के पक्ष में रहे। 90 के दशक के मध्य तक, भारत का पहला मल्टीसिटी डिपार्टमेंट स्टोर, *शॉपर्स स्टॉप* सामने आया। वह भी महिलाओं की पारंपरिक पोशाकों के लिए *बीबा* के पास आया। इस प्रक्रिया में, मीना ने कई सबक सीखे।

‘हम पर ज्यादा व्यवसायिकता का दबाव पड़ा--अपनी प्रतिबद्धता पर टिके रहना, समय पर माल पहुंचाना और गुणवत्ता में समझौता किए बगैर कीमत कम करना।’

यह आसान नहीं था। शुरुआत से ही *बीबा* अपने उत्पादों का आउटसोर्स करता रहा था।

‘जब भी प्रोडक्शन से जुड़ी समस्याएं सामने आतीं, मेरी पहली प्रतिक्रिया होती--मैं क्या कर सकती हूं? मेरे कारीगर ही ऐसे हैं!’

लेकिन जब समस्या आती, मीना उसका समाधान निकाल ही लेतीं। एडवांस प्लानिंग, कंट्रोल सिस्टम और गुणवत्ता चेक ने दर्जियों को काम में रुचि दिखाने के लिए प्रेरित किया। संजय ने ऐसे कार्यों को बखूबी संभाला।

‘मैं नहीं कह सकती कि 100 प्रतिशत मेरी ही मेहनत थी, लेकिन मैं 100 प्रतिशत उससे अलग भी नहीं थी--यह मिलाजुला काम था।’

1993 में बीबा के पास 10 कर्मचारी थे और लगभग 100 दर्जी। दर्जी 10 या 20 के समूहों में काम करते थे, और दर्जियों की पृथक इकाई को पृथक कंपनी का काम सौंपा गया। इससे जिम्मेदारी का अहसास बढ़ा।

‘एक इकाई को एक समय में 500 पीस देने के बाद हम उनसे काम पूरा होने की तारीख पूछ लेते थे।’

अगर डिलीवरी डेट करीब हो और दर्जी उसे पूरा नहीं कर पा रहे हों, तो उनसे रात में भी काम करने के लिए कहा जाता। लेकिन मांग लगातार बढ़ती जा रही थी, और उसे पूरा करने की चुनौती भी।

‘आदमियों की शर्ट के लिए आपके पास एक असेंबली लाइन होती है। सलवार-कमीज के एक पीस को तैयार करने में 5-6 कारीगरों को लगना पड़ता है।’

इससे भी बढ़कर, फैब्रिक हैंडमेड है, मिल-मेड नहीं। तो इसे मानकीकृत नहीं किया जा सकता।

‘अगर मैं जयपुर से किसी खास प्रिंस का 1000 मीटर फेब्रिक मंगवाऊं तो वह कम से कम पांच शेड में आएगा। तो बल्क ऑर्डर को कैसे पूरा किया जाता?’

सीमाओं में रहते हुए काम करना और फिर भी सीमा से पार जाना ही उद्योगपति की असली परीक्षा है। और *बीबा* ने यह इम्तेहान शान से पास किया। साल 2000 में, उत्पादन का स्तर 5000 पीस प्रतिमाह था।

‘रेडिमेड सलवार-कमीज का आइडिया नया था और हर स्टोर किसी सप्लायर को ढूंढ़ रहा था। मुझे कहीं नहीं जाना पड़ा--लोग खुद मेरे पास आए।’

‘मैं जानती थी कि जब भी मेरे पति का ट्रांसफर होगा हमें फ्लैट खाली करना होगा। बॉम्बे में कहां फ्लैट मिलेगा--वह असंभव है। लेकिन मैंने फ्लैट के लायक पैसे कमा लिए थे, तो मैं वहां रहने की सोच सकती थी।’

मांग कभी भी चिंता का विषय नहीं रही--*शॉपर्स स्टॉप* और फिर पेंटालून के नए खुलते आउटलेटों ने मांग को और भी बढ़ाया।

‘हमने अपने टेलर मास्टर को बोल दिया, ‘‘हमारे पास तुम्हारे लिए काफी काम है। आप और स्टाफ क्यों नहीं बढ़ा लेते?’’ तो उन्होंने भी खुशी-खुशी हमारे साथ तरक्की की।’

दर्जियों को नकद में भुगतान करना होता था और स्टोर उधारी में काम कराते थे। लेकिन उधारी का समय 30-45 दिन का ही होता था और उसमें सामान्यतः कोई देर-सवेर नहीं होती थी। तो *बीबा* यह सब बैंक की सहायता के बिना अपने दम पर हैंडल कर लेता था।

‘हमने कभी बाहर से पैसा लेने की नहीं सोची। मैं इसे अच्छा नहीं मानती थी--पर शायद हम और ज्यादा जल्दी तरक्की कर पाते।’

बीबा में बदलाव का पल तब आया, जब 2002 में हार्वर्ड से स्नातक करके आए, मीना के छोटे बेटे सिद्धार्थ ने कंपनी में प्रवेश किया।

‘सिद्धार्थ की सोच बिल्कुल स्पष्ट थी कि हमारे अपने आउटलेट होने चाहिए।’

बीबा ने 2004 में, मुंबई के ऑर्बिट और सीआर2 मॉल में अपने शुरुआती आउटलेट खोले। दोनों ही दुकानें पहले दिन से ही उल्लेखनीय रूप से सफल रहीं। उनकी मासिक बिक्री 12-15 लाख प्रतिमाह होने लगी।

‘इससे हमें प्रोत्साहन मिला और हम नए खुलने वाले अच्छे मॉलों में अपनी दुकान बुक करवाने लगे। खुद ब खुद हमारे कदम सफलता की राह पर चल दिए।’

यकीनन इस तरह के विस्तार के लिए सुनियोजित व्यवस्था और फंडिंग की जरूरत पड़ती है। इन पहलुओं को सिद्धार्थ ने संभाल लिया। वास्तव में, एक तरह से पूरी कंपनी को फिर से व्यवस्थित किया गया। 2006 में *बीबा* ने 110 करोड़ रुपए में कंपनी के 10 प्रतिशत शेयर किशोर बियानी को बेच दिए।

‘2004 से हमारी विकास दर असाधारण रही,’ मीना स्वीकारती हैं।

मार्च 2012 में, बीबा की सालाना आय थी 300 करोड़ रुपए, जिनमें 50 प्रतिशत भागीदारी कंपनी के 90 आउटलेटों की भी थी। कंपनी अभी भी बाहर से काम करवाती

रही, साथ ही 1000 लोगों को सुपरवाइजर के रूप में नौकरी पर भी रखा गया।

'पॉकेटमनी' के लिए शुरू किए गए बिजनेस ने वाकई में लंबा रास्ता तय कर लिया था।

'जब यह शुरू हुआ था, मैंने ऐसा कभी सोचा भी नहीं था... लेकिन जब आप बढ़ने लगते हो आपकी दूरदर्शिता भी बढ़ने लगती है। अब, मुझे लगता है हम किसी भी ऊंचाई पर पहुंच सकते हैं, यहां तक कि ग्लोबल ब्रांड भी बन सकते हैं।'

लेकिन क्या बिजनेस का मतलब निजी जीवन के साथ समझौता होता है? मीना मानती है कि वह दोनों के बीच संतुलन बनाए रखने में कामयाब रहीं।

'जब मैंने शुरू किया, तो मैंने शाम 6 बजे के बाद खुद को खाली रखा। मेरे पति नेवी में थे, तो शाम को हमारे लिए बहुत से कार्यक्रम होते थे।'

मीना के सामने समस्या थी उनके पति की ट्रांसफर वाली जॉब। जब उनकी नियुक्ति दिल्ली में हुई, तो मीना को बॉम्बे में ही रुकना पड़ा। उनके पति बहुत सहयोगात्मक थे।

'मैं दस दिन दिल्ली में बिताती और बाकी बॉम्बे में। इस तरह हमने 8-9 साल का लंबा समय बिताया, जब तक कि 1993 में वे रिटायर नहीं हो गए।'

फिर मीना दिल्ली आ गई और संजय बॉम्बे में ही रहा।

'मैंने वर्ली में समुद्र के किनारे एक फ्लैट ले लिया। संजय की शादी हो गई और वह वहां रहने चला गया। मैंने दिल्ली में ऑफिस शुरू किया।'

मीना की गहन और सतत प्रतिबद्धता डिजाइनिंग की तरफ थी।

'कम कीमत, अच्छी क्वालिटी और समय से माल तैयार होना--ये तीन गुण किसी भी सफल बिजनेस के लिए महत्वपूर्ण हैं।'

'मुझे लगता है कि महिलाओं के दिमाग में हमेशा उनका परिवार सर्वोपरि रहता है। आदमी के लिए परिवार जरूरी है, लेकिन उसकी देखभाल करने के लिए बीवी होती है। तो उसके दिमाग में कैरियर ही सर्वोपरि होता है।'

'मैं अपनी समझ पर ही भरोसा कर सकती थी। सादे और सुंदर डिजाइन ही मुझे पसंद आते थे, जो कहीं भी पहने जा सकते थे।'

आज भी, जब *बीबा* हर महीने 60-70,000 पीस बनाता है, और हर पहलू को जांचने के लिए प्रोफेशनल लगे हैं, तब भी मीना डिजाइन की जांच का जिम्मा खुद लेती हैं।

'हमारे पास एक डिजाइन टीम है, लेकिन मैं तब भी उन्हें अपनी राय देती हूं, मैं रंगों का भी ख्याल रखती हूं। सैंपल तैयार होते हैं और फाइनल सहमति मैं ही देती हूं।'

यकीनन डिजाइनों पर एक साल पहले ही काम शुरू हो जाता है। और जब एक बार सैंपल पास हो जाता है, तो फिर तकनीकी प्रक्रिया शुरू हो जाती है। मीना इसे लेकर पूरी तरह से संतुष्ट हैं।

'मुझे बहुत से लोगों से डील करना पसंद नहीं है, और तुम जानती ही हो कि मैं बहुत अच्छी प्रशासक नहीं हूं। सच पूछो तो अगर मुझे ही सब संभालना होता तो मैं अपने काम को इतना फैलाना पसंद नहीं करती।'

वह महसूस करती हैं कि परिवार के साथ काम करना एक नेमत है। क्योंकि आप उन पर भरोसा कर सकते हैं। और आप जो भी बना रहे हैं, वो परिवार के साथ और परिवार के लिए ही बना रहे हैं।

'यकीनन, इसमें सामंजस्य की जरूरत होती है,' वह मुस्कुराती हैं।

मीना के पति को कभी भी बिजनेस में रुचि नहीं थी। यहां तक कि रिटायरमेंट के बाद भी, वे कंसल्टिंग प्रोजेक्ट में व्यस्त थे और एक किताब लिख रहे थे। 2011 में उनका देहांत हो गया।

'मुझे लगता है कि अच्छा ही है कि वे मेरे साथ बिजनेस में नहीं थे,' वह मानती हैं।

बेटों के साथ उन्होंने अपने लिए एक सीमा सुनिश्चित कर रखी थी। फिर भी बहस और मतभेद तो बने ही रहते हैं।

'मैं सोचती हूं कि संजय अपने विचारों के प्रति अडिग था, वह सोचता था कि मैं बदलाव की इच्छा नहीं रखती। लेकिन काम में यह सब चलता ही रहता है। एक मां के रूप में मैं खुद को इससे अलग रखती थी।'

सिद्धार्थ के बिजनेस में जुड़ने से कमाल के बदलाव हुए।

'बिजनेस को आगे बढ़ाने के बारे में बहुत से भिन्न विचार थे,' मीना कहती हैं। 'आखिरकार उन्होंने अलग-अलग काम करने का निर्णय लिया।'

2010 में, संजय ने अपने शेयर बेच दिए और पारंपरिक पोशाकों का अलग ब्रांड *सेवन ईस्ट* शुरू किया।

‘एक परिवार के रूप में हम अभी भी साथ हैं,’ मीना कहती हैं। ‘वास्तव में, यह तरीका ज्यादा बेहतर है, क्योंकि विवाद बस आपकी एनर्जी को खत्म करता हैं।’

एनर्जी ही वह माध्यम है जो कामकाजी मांओं को प्रेरित करता है।

‘अपनी एनर्जी बढ़ाने के लिए मैं योग, प्राणायाम, घूमना और तैराकी करती हूं!’

एक यात्रा जो मीना ने 22 साल पहले शुरू की थी, उसमें एक गहरा विस्तार आया।

‘मुझे निसार्ग दत्त महाराज की किताब, *आई एम दैट* मिली। शुरू में वह मुझे ज्यादा समझ नहीं आई, लेकिन फिर मैंने ‘हम कौन हैं’ और ‘जिंदगी का क्या उद्देश्य है?’ जैसे प्रश्नों पर विचार करना शुरू किया।

मीना ने उस किताब को बार-बार पढ़ा, जब तक कि वह उसे आत्मसात न कर पाईं। बाद में उन्होंने महाराज की और भी किताबें पढ़ीं। आज भी, *आई एम दैट* की एक प्रति उनके बिस्तर के पास की मेज पर रखी है।

‘इसे आप 5-6 पन्ने पढ़कर नहीं समझ सकते, एक समय में आधा पन्ना ही पढ़ें। लेकिन समय के साथ इसने मुझे बदला--मुझे बेहतर और शांत इंसान बनाया।’

एक ऐसा व्यक्ति जो दूसरों को दोष नहीं देता क्योंकि हर कोई अपनी भूमिका निभा रहा है। तो आप संसार को वैसे स्वीकारो जैसा वह है, न कि जैसा उसे होना चाहिए। जो खुशी आपको मिली है उसका आनंद लो।

‘मुझे खाना बनाना पसंद नहीं है, लेकिन मुझे घर की देखरेख, साज-सज्जा, बागबानी और दोस्तों से मिलना पसंद है।’

सभी चीजें सुंदर और जीवंत हैं, हर खुशी चाहे वह छोटी हो या बड़ी।

एक महिला बीवी भी हो सकती है, एक मां भी और एक उद्योगपति भी।

सपने देखो और उन्हें साकार करने में जुट जाओ।

*

महिला उद्यमी की सलाह

अगर आप वाकई में कोई काम करना चाहती हो, तो उसे कर डालो। हर महिला में सक्षमता और योग्यता है, बस यह नहीं सोचना चाहिए ‘हम तो नहीं कर सकते।’

महिलाएं स्वाभाविक रूप से महिलाओं द्वारा बनाए उत्पादों की तरफ आकर्षित होती हैं। हम सभी कपड़े और गहने पहनते हैं, अच्छा खाना खाते हैं। तो इन क्षेत्रों में व्यवसाय शुरू करना आसान होता है।

मेरे पास कोई औपचारिक प्रशिक्षण नहीं था, न तो व्यवसाय में और न ही डिजाइनिंग में, मेरे पास पैसा भी नहीं था, और पति की ट्रांसफर वाली नौकरी भी एक समस्या थी। तो, देखा जाए तो, मेरे रास्ते में तो बहुत सी अड़चनें थीं, पर फिर भी मैंने छलांग लगाई।

हां, काम में अनुशासन तो होना ही चाहिए। आप यह नहीं कर सकते कि आज किया, कल नहीं किया। ऐसा भी समय था, जब मैं घबराने लगती थी, तब मैं अपने काम के प्रति प्रतिबद्ध रही और उसका सम्मान किया। तो आपको अपना लक्ष्य स्पष्ट रखना होता है।

परिवार के साथ काम करके अपना व्यवसाय बढ़ाना अच्छा है। मैं सभी महिलाओं को इसकी सलाह दूंगी।